Journal of Advances and Scholarly Researches in Allied Education
Vol. XII, Issue No. 23, October-2016, ISSN 2230-7540

उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों का उनकी शैक्षिक निष्पत्ति से संबंध (जिला- गया, बिहार के सन्दर्भ में)

Vinay Kumar[1]* Dr. Seema Pandey[2]

[1]Research Scholar, Satya Sai University, Shehore

[2]Dean

***सारांश** – हमारे देश में माध्यमिक शिक्षा में सैद्वान्तिक अस्पष्टता का भी दोष पाया जाता है। सभी देशों में सामान्य शिक्षा का उद्देश्य बालकों को उन प्रविधियों से अवगत कराना है, जिससे की उन्हें आगे की शिक्षा प्राप्त करने में सुगमता हो तथा अपने वातावरण के उत्तरदायित्वों को समझने तथा जीवन निर्वहन करने के योग्य बनाना है। इसके उपरान्त माध्यमिक शिक्षा पूर्ण रूप से विशिष्ट होती है। इसके विशिष्ट होने के दो प्रधान कारण हैं– पहला यह है कि माध्यमिक शिक्षा छात्रों को मध्यम् स्तर के व्यवसायों के योग्य बनाती है और दूसरे यह है कि माध्यमिक स्तर पर छात्र उन विधियों, प्रविधियों तथा उपकरणों को समझ जाता है जिनका उपयोग वह उच्च शिक्षा के लिए करता है। इस प्रकार हम देखते हैं कि सामान्य शिक्षा समाजोन्मुखी होती है और व्यवसायिक शिक्षा व्यवसायोन्मुखी किन्तु हमारे देश में माध्यमिक शिक्षा न तो छात्रों को व्यवसायिक जीवन के लिए तैयार करती है और न उन्हें उच्च शिक्षा के लिए ही सक्षम बनाती है। यह एक अजीब घाल–मेल की स्थित में पड़ी हुई है। अतएव स्पष्ट शब्दों में यह कहा जा सकता हैं कि माध्यमिक शिक्षा का सामंजस्य उच्च तथा व्यवसायिक शिक्षा से तब तक सम्भव नहीं हो सकता है, जब तक की इसे स्वतंत्र इकाई के रूप में स्वीकार करते हुए इसकी प्रकृति को मनोवैज्ञानिक नियमों सिद्वान्तों के अनुरूप ढाला नहीं जायेगा।*

---------------------------------x---------------------------------

प्रस्तावना

मानव विकास के इतिहास में शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। मानव अपने जन्म–काल में असहाय होता है, उसे जीवित रहने के लिए समायोजन की आवश्यकता होती है। समायोजन की इस प्रक्रिया में इसका सीखना प्रारम्भ होता है। सीखने की यह प्रक्रिया बालक के जन्म लेते ही प्रारम्भ हो जाती है और जीवन –पर्यन्त चलती रहती है। सर्व प्रथम बालक की शिक्षा का कार्य माता की गोद से प्रारम्भ होता है। इस प्रकार माँ प्रथम शिक्षिका होती है। माता के साथ–साथ बालक पिता के सम्पर्क में आता है। पिता भी उसके सीखने के कार्य में योगदान देता है। इस प्रकार धीरे–धीरे शिक्षा कार्य का दायित्व पूरे परिवार का हो जाता है। जब सामाजिक ढ़ाँचें का निर्माण हुआ तो शिक्षा कार्य समाज का महत्वपूर्ण अंग बन गया। समाज द्वारा शिक्षा प्रदान करने का दायित्व समाज के कुछ विशिष्ट व्यक्तियों को दिया गया जिन्हें शिक्षक अथवा अध्यापक कहा जाने लगा। शिक्षा ग्रहण करने वाले व्यक्ति को विद्यार्थी अथवा छात्र कहा गया है। विद्यार्थी सुयोग्य अध्यापकों के पथ–प्रदर्शन में ही अपने श्रेष्ठतम् विकास को प्राप्त करता है। शिक्षार्थी बहुत कुछ अध्यापकों के व्यवहारों एवं आदर्शों के अनुकरण द्वारा भी सीखते हैं। इस प्रकार देश और काल के अनुरूप बालकों को शिक्षा प्रदान कर अध्यापक उन्हें इस योग्य बनाता है कि वे भविष्य में राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में अपनी भूमिका का उचित निर्वाह कर सकें।

इस प्रकार विद्यार्थी राष्ट्र के भविष्य का निर्माणकर्ता एवं आधार स्तम्भ होता है। यदि अध्यापक द्वारा छात्र की वैयक्तिक भिन्नताओं को ठीक से न समझा गया तो अध्यापक द्वारा दी गयी शिक्षा से छात्र के आन्तरिक व वाहय शक्तियों का पूण र्रूप से विकास कदापि सम्भव नहीं हो सकेगा। अतः शिक्षक को छात्र–छात्राओं के वैयक्तिक भिन्नताओं के अन्तर्गत उनके जीवन मूल्य अभिवृत्ति, योग्यता, क्षमता, सामाजिक परिपक्वता, आत्मविश्वास तथा कुण्ठा ग्रस्तता आदि को समझना अत्यन्त आवश्यक है जिससे कि वह समयानुकूल विद्यार्थी के व्यक्तित्व को प्रेरक व मौलिक बना सके।

साहित्य की समीक्षा

स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा को जन साधारण में जागृति उत्पन्न करने का सर्वोत्तम साधन माना है। इस संदर्भ में उनका कथन था कि शिक्षा से मेरा तात्पर्य आधुनिक शिक्षा प्रणाली से नहीं वरन् ऐसी शिक्षा से है जिससे स्वाभिमान और श्रद्धा का भाव जाग्रत हो उन्होंने भारतीय जनता के पिछड़े होने का कारण अज्ञानता माना उन्होंने तत्कालीन शिक्षा प्रणाली को लिपिक उत्पन्न करने वाली सर्वोत्तम मशीन कहा और उसकी कटु आलोचना की उस समय की प्रचलित शिक्षा को उन्होंने देश के आवश्यकताओं के प्रतिकूल बताया और उसे नकारात्मक ज्ञान की संज्ञा दी। शिक्षा के सम्बन्ध में स्वामी जी की मानना था कि ज्ञान मनुष्य में निहित है, वह कहीं बाहर से नहीं आता । उन्हीं के शब्दों में– ''शिक्षा मनुष्य में अन्तर्निहित पूर्ण की अभिव्यक्ति मात्र है।'' उन्होंने अन्यत्र कहा है सब ज्ञान मनुष्य के मस्तिष्क से उत्पन्न होता है। अनन्त पुस्तकालय आपके मस्तिष्क में ही है। इसका अर्थ यह है कि ज्ञान बीज रूप में मनुष्य के मस्तिष्क में पहले से ही रहता है। शिक्षक का कार्य केवल उसका पोषण करना होता है, ताकि वह अंकुरित हो सके और बढ़ सके। शिक्षा के वाहय तत्व जैसे कि अध्यापक

और पाठ्य पुस्तक केवल उसे वह पृष्ठभूमि प्रदान करते है जिसके सहारे ज्ञान बीज जो पहले से ही मस्तिष्क में छिपा है, बढ़ता है।

स्वामी विवेकानन्द के ह्रदय में जनसाधारण के प्रति असाधारण सहानुभूति थी उन्होंने कहा है कि– ''जब तक करोड़ो लोग भूख और अज्ञानता का जीवन व्यतीत करते हैं प्रत्येक उस व्यक्ति को देशद्रोही समझता हूँ जो उन्हीं के मूल्य पर शिक्षित होकर उनकी ओर किंचित भी ध्यान नहीं देता।9 स्वामी विवेकानन्द ने भारतीयों के अन्दर अद्भुत साहस एवं कर्मठता की भावना उत्पन्न करके सामाजिक समानता राष्ट्रीय एकता और राष्ट्रीय स्वतंत्रता का परोक्ष या अपरोक्ष रूप से समर्थन करके तथा सबसे बढ़कर भारतवासियों का उनकी आध्यात्मिक और धार्मिक गुरूता के प्रति विश्वास जाग्रत करके उनके राष्ट्रीय स्वाभिमान के भाव को उच्च स्तर पर पहुंचाकर तथा भारत का इग्लैण्ड के समक्ष समान स्तर पर खड़ा होना सिखाकर आधुनिक भारत के पुनर्जारण में महत्वपूर्ण योगदान दिया।

शिक्षा के स्वरूप महत्व आवश्यकता तथा इसकी उपादेयता के सम्बन्ध में विभिन्न विद्वानों मनीषियों के मत–मतान्तर को समझने के पश्चात् शोध समस्या की दृष्टि से माध्यमिक स्तर की शिक्षा तथा उसके स्वरूप को समझ लेना नितान्त आवश्यक प्रतीत होता है।

माध्यमिक शिक्षा

शिक्षा एक सतत् चलने वाली प्रक्रिया है जिसका न कोई आदि है न अन्त। मानव जन्म से लेकर अपने अस्तित्व के धूमिल होने तक शिक्षारत रहता है। बस यदि कुछ बदलता है तो वह शिक्षा का स्वरूप प्राथमिक शिक्षा, माध्यमिक शिक्षा, उच्च शिक्षा, व्यवसायिक एवं तकनीकी शिक्षा इत्यादि किन्तु विवेचन करने से स्पष्ट होता है कि शिक्षा में माध्यमिक शिक्षा सबसे महत्वपूर्ण स्तर है। यह प्राथमिक और उच्च शिक्षा के मध्य सम्बन्ध स्थापित करने वाली कड़ी है। इस शिक्षा का सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था में विशेष महत्व है। किशोर बालक–बालिकाओं में ज्ञानवर्धन के साथ–साथ सामाजिक सद्गुणों का विकास अधिकारों एवं कर्तव्यों का ज्ञान राष्ट्रीय एकता एवं अखण्डता के प्रति जागरूकता, आत्म निर्भता और आत्म विश्वास आदि चारित्रिक गुणों का विकास करना माध्यमिक शिक्षा का मूल उद्देश्य है।10-15

शक्षा आयोग (1964–66) ने माध्यमिक शिक्षा को दो भागों में विभाजित किया है। ये दो भाग हैं निम्न माध्यमिक शिक्षा तथा उच्च माध्यमिक शिक्षा। माध्यमिक शिक्षा के उपरान्त ही बालक उच्च शिक्षा में प्रवेश करता है। माध्यमिक शिक्षा स्तर प्राथमिक तथा उच्च शिक्षा स्तरों के बीच स्थित होने के कारण सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। इसके तीन प्रमुख कारण हैं। प्रथम माध्यमिक शिक्षा सामान्य शिक्षा की परिसमाप्ति है। बालक के विकास की किशोरावस्था से सम्बन्धित होने के कारण तथा युवा शक्ति के नेतृत्व प्रशिक्षण का केन्द्र होने के कारण माध्यमिक शिक्षा राष्ट्र की सामाजिक आर्थिक तकनीकी तथा सांस्कृतिक क्षमता को सर्वाधिक प्रभावित करती है। द्वितीय माध्यमिक शिक्षा रोजगार तथा जीवन–यापन के क्षेत्र में प्रवेश का द्वार खोलती है। किसी भी राष्ट्र की मानव शक्ति का एक बहुत बड़ा भाग माध्यमिक शिक्षा स्तर से ही प्राप्त होता है। तृतीय माध्यमिक शिक्षा प्राथमिक शिक्षा व उच्च शिक्षा स्तरों की गुणवत्ता को निर्धारित करती है। प्राथमिक स्कूलों के अधिकांश अध्यापक माध्यमिक शिक्षा प्राप्त होते हैं तथा उनकी शिक्षा की गुणवत्ता काफी सीमा तक प्राथमिक शिक्षा की गुणवत्ता को प्रभावित करती है। इसी प्रकार से विश्व विद्यालयों, महा विद्यालयों तथा अन्य उच्च शिक्षा के केन्द्रों के लिए छात्रों की पूर्ति का कार्य भी माध्यमिक शिक्षा करती है। उच्च शिक्षा के लिए माध्यमिक शिक्षा आधार–शिला का कार्य करती है। स्पष्ट है इन तीनों दृष्टियों में माध्यमिक शिक्षा सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण अंग है। माध्यमिक शिक्षा के इस महत्व के कारण ही इसे शिक्षा रूपी जीव को रीढ़ की हड्डी भी का जाता है। जिस प्रकार से रीढ़ की हड्डी मनुष्य के सम्पूर्ण शरीर को सम्हाले रहती है ठीक उसी प्रकार से माध्यमिक शिक्षा भी सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था को संभालती है। यदि माध्यमिक शिक्षा की गुणवत्ता श्रेष्ठ होती है तो प्राथमिक शिक्षा उच्च शिक्षा तथा तकनीकी व व्यवसायिक शिक्षा भी गुणात्मक दृष्टि से श्रेष्ठ होती है। अतः यह आवश्यक है कि माध्यमिक शिक्षा सम्पूर्ण शिक्षा क्रम की एक मजबूत कड़ी हो।

माध्यमिक शिक्षा आयोग और माध्यमिक शिक्षा

माध्यमिक शिक्षा आयोग के सम्बन्ध में डा0 आत्मानन्द मिश्र ने कहा है, ''देश के भावी कर्णधार माध्यमिक शिक्षा के ढाँचे में बनते और बिगड़ते हैं। उनमें नेतृत्व करने की क्षमता इसी स्तर पर उत्पन्न की जाती है। दुर्भाग्यवश शिक्षा की यह कड़ी जितनी महत्वपूर्ण और अनिवार्य है उतनी ही निर्बल और उपेक्षित भी'' आयोग ने माध्यमिक शिक्षा की अनेक कमियों को गिनाते हुए कहा–''माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य उच्च शिक्षा के लिए तैयारी मात्र है'' आयोग ने इसे उद्देश्य पूर्ण बनाने के लिए व्यवसायिक स्कूलों की स्थापना, परीक्षा प्रणाली, अध्यापक, प्रशिक्षण एवं शिक्षकों की स्थिति में सुधार आदि पर बल दिये जाने का सुझाव दिया।11

वर्तमान शिक्षा के क्षेत्र में क्रान्ति लाने का श्रेय मनोविज्ञान को है। शिक्षा में मनोवैज्ञानिक प्रकृति के विकास के फलस्वरूप शिक्षा को बाल कन्द्रित बनाने का प्रयास किया गया और शैक्षिक समस्याओं का अन्त करने के लिए शिक्षा शास्त्रियों ने शिक्षा के क्षेत्र में मनोवैज्ञानिक सिद्वान्तों पर बल दिया। आज शिक्षा का अर्थ बालक को केवल सूचना प्रदान करना नहीं समझा जाता। शिक्षा शब्द की व्याख्या आज मनोवैज्ञानिक ढंग से की जाती है शिक्षा का कार्य बालक के व्यक्तित्व का स्वभाविक एवं संतुलित विकास करना है। मनोविज्ञान की सहायता से शिक्षा प्रक्रिया को अधिक रोचक और उपयोगी बनाया जा सकता है। साथ ही शिक्षण सम्बन्धी समस्याओं का समाधान भी किया जा सकता है। किन्तु यह सब तभी सम्भव है जब हम बालक के व्यक्तित्व सम्बन्धी विभिन्न विशिष्टताओं व उसकी विभिन्नताओं को ठीक से समझें। माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों के सीखने में उनके सामाजिक परिपक्वता, आत्मविश्वास व कुण्ठा स्तर का अत्यधिक महत्व है। तीनों का कहीं न कही अन्तर्सम्बन्ध भी है। सामाजिक परिपक्वता तथा आत्मविश्वास का बढ़ा हुआ स्तर जहाँ बालक के व्यक्तित्व को सकारात्मक रूप से प्रभावित करता है। वहीं कुण्ठा का बढ़ा हुआ स्तर नकारात्मक रूप से बालक के व्यक्तित्व को प्रभावित करता है। ऐसी स्थिति में इन तीनों चरों (विशेषताओं) की प्रकृति व उनके सैद्धान्तिक स्वरूप को समझना परम आवश्यक है।

उपसंहार

शिक्षा द्वारा ही बालक के व्यक्ति का बहुमुखी विकास सम्भव होता है। यही कारण है कि शिक्षार्जन की दृष्टि से विद्यार्थी जीवन का महत्व सर्वविदित है। उच्च माध्यमिक स्तर के अधिकांश छात्र–छात्राएं किशोरावस्था में होते हैं। इस अवस्था को मनोवैज्ञानिकों ने अत्यन्त संवेदनशील व संवेगात्मक रूप से आस्थिर माना है। इस अवस्था में छात्र–छात्राओं के व्यक्तित्व में

www.ignited.in

जब सामाजिक परिपक्वता व आत्मविश्वास की कमी हो जाती है तो वे शैक्षिक व व्यक्तिगत समस्याओं का सामना ठीक से नहीं कर पाते, जिससे उनमें कुण्ठा का भाव उत्पन्न हो जाता है। यह कुण्ठा उनके शैक्षिक निष्पत्ति को प्रभावित करती है जिसके कारण उनके विकास एवं समायोजन में बाधा उत्पन्न होती है। अनुशासनहीनता की समस्या भी कुण्ठा के कारण उत्पन्न हो जाती है। ऐसी स्थिति में विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता, आत्मविश्वास तथा कुण्ठा का उनके शैक्षिक निष्पत्ति से अन्तर्सम्बन्धों को समझना परम आवश्यक है। इसे भलीभाँति समझकर ही हम विद्यालय तथा घरो में छात्र–छात्राओं को ऐसा शैक्षिक एवं सामाजिक वातावरण दे सकेंगे कि उनके सामाजिक परिपक्वता एवं आत्मविश्वास का विकास हो सके तथा कुण्ठा उत्पन्न न हो।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

कपिल डॉ0 एच0 के0 (2008). सांख्यिकी के मूलतत्व, आगर–2, विनोद पुस्तक मन्दिर।

कौर, तेसेन्दर एण्ड मेहता, मंदी (2007). कम्प्रेटिव स्टडी ऑफ द लेवल आफ अचीवमेंट, मोटीवेशन सेल्फ कान्फीडेन्स एण्ड असरटिवनेस अमांग एडोल्मेन्ट गर्ल्स, इण्डिया जर्नल ऑफ साइकोमेट्री एण्ड एजूकेशन वैल्यूमम–38 छवण 2।

कुण्डू एण्ड टुटू (2007). एजूकेशन साइकोलॉजी, दिल्ली, स्टरलिंग पब्लिशर्स प्रा0लि0।

उपाध्याय, हिमानी एण्ड भल्ला, डिम्पल (2006). रोल आफ एजूकेशन फार फिजिकली हैण्डीकैप्ड प्यूपुल इन डवलपमेंट आफ सेल्फ कान्सेप्ट, सेल्फ कान्फीडेन्स, फ्रस्टेशन एण्ड डेप्रिवेशन, इण्डियन जर्नल ऑफ साइकोमेट्री एण्ड एजूकेशन बै0–37, छव. 2।

उ.प्र. सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, 2006

कौल, लोकेश (2004). मेथेडोलॉजी ऑफ एजूकेशन रिसर्च, न्यू देलही, विकास पब्लिसिंग हाउस प्रा0लि0।

अग्रवाल एस. के. (1980). शिक्षा के तात्विक सिद्धान्त, मेरठ, राजेश पब्लिशिंग हाउस।

अग्रवाल डा. जी. के. (1980). मानव समाज, आगरा, ओम प्रिन्टिंग प्रेस पचकुइंया।

अग्रवाल, डा. गोपाल कृष्ण (1994). सामाजिक नियन्त्रण एवं परिवर्तन, आगरा, आगरा बुक स्टोर।

Corresponding Author

Author Name*

Author Designation

E-Mail – chintuman2004@gmail.com